लगे।

पांडे जी ने अपनी स्त्री की ओर आँखें उठाईं तो पाया कि वह खुद उनकी ओर देख रही थीं। ऐसा लगा कि दोनों ही एक-दूसरे से कुछ कह रहे हैं, पर ठीक-ठीक कह नहीं पा रहे हैं।

सलमान साहब अगली रोटी का इन्तजार कर रहे थे, लेकिन स्त्री स्टोव के पास से उठकर भीतर चली गई थी और कुछ ढूंढने लगी थी।

सलमान साहब आम खाने लगे थे।

स्त्री जब बाहर निकली तो उसके हाथ में कांच का एक गिलास था और आंखों में भय।

उसने सलमान साहब की थाली के पास रखा स्टील का गिलास उठा लिया था और उसकी जगह काँच का गिलास रख दिया था।

सलमान को याद आया कि अभी शाम को जिस गिलास में उन्होंने चाय पी थी, जिस थाली में वे खाना खा रहे थे, वह स्टील की ही थी। पल-भर के लिए वे चिन्तित हुए। फिर उन्होंने अपनी थाली उठाई और परनाले के पास जाकर बैठ गए। गुझना उठाया और अपनी थाली माँजने लगे।

स्त्री ने थोड़ा-सा पीछे मुड़कर उनकी ओर देखा, लेकिन फिर तुरन्त बाद ही वह अपने काम में व्यस्त हो गई।

मिश्रीलाल अभी तक नहीं आया था।

अब्दुल बिस्मिल्लाह

जन्म : जुलाई, 1949

प्रमुख कृतियाँ : झीनी झीनी चदरिया (उपन्यास) कितने कितने सवाल (कहानी संग्रह) छोटे बुतों का बयान (कविता)

आवाज की अरथी

–आलमशाह ख़ान

सूरज ढले छग्गी पोखर टोले पहुँची थी। धनुष की ढब मुड़ी बाँस की खपच्चियों पर सधी अपनी झुग्गी के सामने, कंधे पर झूलते तार के छींके-पिंजरे पटक कर उसने हाथ झटक दिया। फिर ओछे हाथ को पूरे हाथ से सहलाकर सामने देखा–नरसिंघा मरी चाल से बढ़ा आता था। उसके कंधे पर टिकी सोटी पर रबर के डोरे में बँधे तोता-मैना सटे हुए डोल रहे थे। उसे लगा भोर को जितने तोता-मैना थे, उतने ही अब भी हैं। एक कड़ुवाहट उसके सूखे गले में उतर गई।

पोखर की पुलिया पर बैठे फन्ने ने दोनों माँ-बेटों को झुग्गी के सामने जो देखा तो लकड़ी के सहारे टाँग उछालता उनके पास चला आया। थोड़ी देर चुपचाप रहा। छींके-पिंजरे और कागजी तोता-मैना के ढेर को देखकर उसने दोनों आँखें तरेर कर घूरा और बिना कुछ बोले झुग्गी के सिरे पर बिखरे अधबने खिलौनों को झल्ला कर एक ठो करने लगा। फिर एकाएक सामने पड़े खिलौनों और छींके-पिंजरों को दोनों के सर पर मार गालियाँ बकने लगा।

''अब और पिंजरे-खिलौने बनाकर तुम दोनों के बापों को उसमें धरूँ-बहलाऊँ?''

''अरे! कुल्लाय क्यूँ है, इन छींके-पिंजरों पर कोई हाथ न धरे तो मैं क्या करूँ? किसी के गले बाँध दूँ इन्हें?''

''...तू न बँध जा किसी के गले? इधर को गला फाड़ती, बस्ती-बाजार में बोल नी फूटता के ले लो छींका-पिंजरा...''

''अरे दिन भर बोला...गला फाड़ा पर कोई आँख न उठी। एक बाबू ने देखा,

बोला, 'घरवाली पसंद करे तो ले डालूँ'... घर तक ले गया पर घरवाली थी कहाँ? लंडूरा था। मुझे ही बुलाने लगा घर में।''

''...फिर क्या?' थूककर पलट आई।''

''...वा रे सती! सावतरी! थोड़ी पसर लेती तो कौन रूप ढल जाता?''

''...मरद है कि सूकर?...लाज कर।''

''...ओ लजवंती! जो सोईं नहीं आज तक इधर-उधर?''

''...मूँडकटे! मर, तेरे जैसे मरभूखे मेरे बाप ने ही इधर-उधर किया मुझे। बस, अपने मन से तो मूता भी नी तेरे मूँ में।''

''...पूतनी है। सिकल देखी पोखर में? चमड़मढ़ी ठट्ठर, बजाओ तो ढब-ढब...बने हैं रसीली...खुसक पोखरी, बिछी जरूर होगी वहाँ, ऐंठा होगा कुछ, यहाँ चलित्तर दिखा रही। दिखा अंटी?''

''...ले देख अपनी माँ भेण का'', कहते हुए उसने दो हाथ का लीतरा ही नहीं, फटियल चोली तक उतार फेंकी। भन्नाती हुई बोली, ''ओर दिखाऊँ तेरे को तेरी जनम-जगा?''

''...अरी! परा समेट रूप अपना? बालक देखेंगे तो खौफा जाएँगे। कोई मरद जो यें देखेगा तो मरदानगी मर जाएगी उसकी।''

''...तू तो मरदुआ नहीं? मेरे को देख, तेरा मरद तो मर ही गया। खोदी है, जो खोदेगा नहर। भोथरा भट्टा मरद बने हैं।''

''री मा! खों-खों ही करेगी या खाने का जुगाड़ भी बैठायगी? भूख लगी है।'' नरसिंघा चुप दोनों की बतभेड़ देख रहा था; अब बोला।

''ले खिला खसम को अपना मूँड।''

''खसम होगा तेरी भेण का, मेरा तो बेट्टा है।''

''बता, अपने बाप की माँ के खसम! कित्ता लाया? तोता-मैना तो जूँ ही बैठे हैं तेरी माँ की मुँडेर पे'' फन्ने ने नरसिंघा से पूछा।

''बप्पा! अब तो इन कागज के तोता-मैना को कोई ना पूछे। पिलास्टिक के खिलौने ला दे, वो बेच लूँगा। उसने खीसे झाड़ कर कुछ सिक्के सामने धर दिए।

''मर साले पिलास्टीक गयी तेरी माँ की पोपली पेंदी में'', उसने तोते गिनते हुए

कहा, ''अरे! जे तो आठ हैं, मैना पंदरा और गुलदस्ते तो जो के जो हैं। पैसे कित्ते हैं।'' नब्बे, कुल? मा-खोर! बीस में से आठ बचे। बारा तोतों के एक बीस तो जे ही हुए और मैना के पचास अलग; कुल एक सित्तर का बेच हुआ - दे, बाकी किधर को?''

''पचास की पोस्त और...''

''और क्या, बाकी माँ के यार को चटा दिए?''

दूँ एक झाप, बता?''

''एक चा और पाँच की मूँगफली।''

''कंजर कूँ हजार बार बोला, दो का बिकरा हो तो 'चा' पिया कर।'' फन्ने ने तन्ना कर एक थप्पड़ नरसिंघा को जमा दिया।

''कसाई क्यूँ मारे है? दिन भर भूखा डोला, एक चा पी ली तो कौन तेरी कुँआरी भेण का दूध पी गया?''

''आये छिनलिया! चुप कर, इसने अपनी ही कुँआरी माँ का दूध पिया है, नी तो...बारा बजे से, तेरा बाप बाबू लोगों के कैंटिन के पास डोलता रहा। जूठन-फेंकन से पेट भरा...साँझ को फिर आ गया ठूँसने। मेरी झुग्गी में अब तुम दोनों के लिए कोई ठौर नहीं। मरो पल्ले कोने में। फन्ने ने बीड़ी सुलगाई और धौंकने लगा। रुक कर बोला, ''अब आना बेट्टे पोस्त पीने!''

''मैंने हजार टेम बोला तेरे कूँ, इस लौंडे को पोस्त की लत मत डाल...'' छग्गी उफन कर बोली।

''पोस्त की लत न हो तो, बेट्टा कल ही भाग खड़ा होगा। इसी से बँधा हेगा।''

''ओ नीच! तो जूँ पाल रखा है मेरे नरसिंघे को?''

''नी, तो तेरे रूप पे रीझा था? इसी खूँटे के बल तेरे को गले बाँधा था, नी तो तू है कौन? समझ ले अब इसी लौंडे-लीतरे पर चलेगी तेरी रोटी।'' तीनों के बीच चुप्पी तनी रही। थोड़ी देर बाद छग्गी ने आगे हाथ बढ़ा फन्ने के मुँह से बीड़ी झपट ली और सुट्टे लगाते हुई बोली, ''ले ये डेढ और ले आ अद्धा।'' उसने चोली के गूमड़ में से गाँठ निकाली।

''कब से सहेज रखे हैं?'' फन्ने के गुंजल चेहरे पर तनाव रुका और बिला गया, बोला, ''तो ले लौंडे, पोस्त तोड़ और भिगो, आया मैं'' और वह लकड़ी के सहारे लँगड़ी टाँग उचकाता उठ खड़ा हुआ।

* * *

सूखे-भीगे, झाड़-झक्खड़ भरे, तपते-ठिठुरते बरसते-रिसते उनके दिन और रात वहीं पोखर में खपते थे। वहीं बच्चे जनमते, किलकिलाते, बिलबिलाते, बढ़ते और किसी को अपने बेहाल-बेघर होने का गुमान तक न होता। पर इस बार पूस, ठंडी आग बखेरता आया। ठंडी के साथ बेधने वाली बयार उनके कंकाल को खँगाल गई। बूढ़े कँपकँपाने लगे। टाबर दाँत किटकिटाते, बड़े-मोटियार झुरझरी नहीं झेल सके और नन्हें तो लंबे ही हो गए।

वैसे अनोखा-अनभोगा कुछ भी नहीं था। ऐसे मौसम पहले भी आये थे और ठसक बता बीत गए थे। पर इधर जब से रैन-बसेरों की बात पोखर टोले में चली, तभी से सब एक ठौर जुड़े थे और रातें उधर ही रैन-बसेरा में काटने की ठानी थी।

रैन-बसेरे में आज पहली ही रात काटकर टोले के भाइले-भाइयों और मा-भैणों ने आँखें खोली थीं। बसेरे के फेराव में उन्हें अजीब-सा लगा, जैसे दूजे देस नहीं दूजे लोक आ गए हों।

पेटी में बंद मुर्गे की बाँग के साथ ही टोले में तू-तू मैं-मैं, रोना-पीटना मच जाता था। यही उनके जीने-जागने की पहचान थी। आदमी लुगाई के झोंटे नोचते, लुगाई मरद की मूँछ उखाड़ लेती थी और फिर एक-दूसरे की आसकी-मासकी बखानी जाती।

''तू तेरे भेण के मरद के साथ सोई।''

''तूने तेरी भौजी संग मूँ काला किया।''

''तू चोर।''

''तू छिनाल।''

''तेरा बाप धाड़वी।''

''तेरी माँ के चलित्तर देखे।''

''ये मेरा मूत नी तेरे भाई का तुखमा।''

''ऐ, लाज मर, में नी बोल दूँ, तेरा मूत तेरी भेण की कोख।''

''ओ चंडिये।''

''ओ रंडुए।''

''खसमखानी, आदमखोर।''

''लुगाई का रज पी ली, नीच।''

पोखर टोले में यही सब चलता। फिर साँझ को जुटाए फूस-फाचर, कागज-कूड़ा, टहनी-ठूँठे धधकते, बीड़ियाँ सुलगतीं। रात के भीगे पोस्त के छिलके आग पर धरे काले-कठियाए डिब्बे में खौलते, खुदबुदाते, फिर चीकट धोती के छोर से छन-छनाकर टूटे हैंडिल के मगों में ढल जाते। पोस्त की गंधियाई भाप में वे एक-दूसरे का मुँह जोहते और कभी चहक और कभी अनबोले बोल के साथ उसके अपने सूखे गले की घाटी में उडेंल लेती। आकाश की काली टूटकर जब उनके आँखों के डोरों में बस जाती तो वे पोखर-पुलिया से सूरज का चढ़ना देखते। बूढ़े-बड़े मोटियार, नाले पर खड़े चायवाले सिंधी के खोखे के आगे जा बैठते। फिर बोल के गोल फूटते, फिर झंझट-झग्गड़ होता। हाथापाई तक की नौबत आ जाती। किसी को अजब नहीं लगता। सब जानते थे, ये रोज होता है। लोग देखकर भी अनदेखे निकल जाते। चाय की सुड़क के साथ फिर खों-खों होती, फिर दाँतों में बीड़ियाँ दबा टोली बिखर जाती, रोजी-रुजगार के लिए। किसी के कंधे पर टीन के कनस्तर पीटने, ठीक करने के औजारों की पेटी झूलती, किसी के सर पर चीनी-काँच के बरतन और फटे-जूने कपड़े होते। कोई कागज-गत्ते के खिलौने लिए होता। दिन में कभी-कभार मिलना होता, साँझ पड़े फिर जुड़ते...फिर जिंदगी बजने लगती।

''तू पी आया कमाई, तेरा चाँचर राँधूँ?''

''तू खा आई कबाब-कचालू, अब खा गू-गोबर।''

''मूँडकटी मा को, बीड़ी-चा चटानी थी तो उसी के संग सोता; राँड क्यूँ लगाई गले?''

''बाप बूढ़ल के मूँ में दारू क्यों मूता?'' जा उसी से अपनी टाँग गरमा।''

''मूत हरामी का दूध मेरा,'' बोल के साथ कोई माँ चिथयाई छाती ठूँस बच्चे को धबक देती।

रात के बसियाए गले में, भोर-किरन के पथराए जाने पर भी जब पोस्त-रस न उतरा तो रैन-बसेरे में ही बकझक की झड़ी लग गई। आज वे सरकार और नेताओं के माँ-बापों को बखान रहे थे। उनसे रिश्ता-नाता जोड़कर चिल्ला रहे थे- बस एक टटरा गोदाम सा खोल दिया और बकरों-बैलों की जूँ भर दिया सबको। चा-पानी कुछ भी नहीं। कोई नौ बजे प्रबंधक जी आये तो कुहराम मचा था। गंदगी अलग। सब देख-

सुनकर उन्होंने माथा पीट लिया और पोखर टोले वालों को निकाल बाहर किया। वे बकझक करते, गालियाँ उछालते रैन-बसेरे से बाहर आ गए।

* * *

साँझ घिरे पोखर टोले ने आज फिर साँस ली। उखड़े बाँस-खपच्चियाँ फिर खड़े हुए थे और टीन-टाट ने तनकर बित्ते-भर जमीन को आकाश की छाँव से काट दिया था। दस-बीस झुग्गियाँ फिर उभर आई थीं जैसे-तैसे पहर बिलमायों भोर हुए, फिर जुगत जुड़ी। और दिनों की चलते आज चिल्ल-पों कम थी। बीड़ी के सुट्टों से खोलियों में धुआँ अटा जा रहा था।

''खेल-खिलौने कोई लेवे नी, छींके, पिंजरों के दिन गए। अब जूँ कैसे चलेगा?'' छग्गी ने अपनी छठी अंगुली चटकाते हुए कहा। ''अपना तो टेम टल गया, नरसिंघा बिन खाए नहीं रेणे का।''

''तू करे ना कोई जुगाड़? तेरे तो बीस ऊपर एक उँगली है।''

''जासती उंगली दीख रही है। भगवान् ने जो दो की ठौर डेढ़ ही हाथ दिया वो दीदे में नी आता। ''उसने अपने ठँठे से हाथ को नचा कर कहा।

''किचकिचाने का टैम नी। छोकरे को मना ले, सब फिर चल जाएगा।''

''छोकरे को क्या करना बोल?'' उसने गूदड़ी में पड़े नरसिंघा के धूसर बालों में अंगुलियों से कंघी करते हुए पूछा।

''इसे करना कुछ नी...बस बजरंग बली बनना है।''

''बजरंगबली...हनुमान?''

''ऐसे पूछ री है जूँ हिंदू नी, तुरक हो।''

''बोल भी कराएगा क्या उससे?''

''कुछ नी बस... उसकी देह एक लाल लंगोट धार देंगे...सिंदूर से बदन पोत देणा है, फिर मूँ में रामगोला ठूँस के बाल धोने की मिट्टी से लीप, पीछे बनार-पूँछ खोंस, खप्पर थमा उसे सहरी-बस्ती में डोला देंगे। कुछ तो धरम लोगों में है, दान-दच्छिना मिल ही जाएगी। ''

''इसके मूँ में रामगोला ठूँसेगा? ऊपर मिट्टी पोतेगा? मेरे बछड़े का दम नहीं घुट जाएगा?''

''तेरा जना, दूधमुहा कुँवर कन्हैया जू नी, दस ऊपर दो का धींग है-उसकी जवानी नाक-काँख के नीचे फूट रही। समझेगी नी और बकबक लगा देगी। सुन, इसे थोड़ा नाक से साँस लेने की आदत बनानी पड़ेगी। दो-एक दिन यहीं रबत डाल देंगे। आज से ही ले।''

''ये क्या करतब हुआ भला पेट पालने का? मेरे बेट्टे की साँस में नी बंद करने की।''

''यूँ तो साँस बंद नी होगी। खाने को जी नी मिलेगा तो उसकी तो क्या तेरी भी बंद हो जाएगी। पोस्त का पानी जो गले नी उतरा तो बैठा नी होना, मरा पड़ा रहेगा। उधर उसकी महतारी का मूतना-हगणा रुक जाएगा।''

''और तू कौन पहाड़ चढ़ आएगा, तेरी आँख नी उधड़ने की। मेरी कोख फटी है न...अपना तुखम होता तो लगता।''

''अरे! मेरा तुखम होता तो कौन राज करता? इधर-उधर मोटे-मानुस की सेवा-टहल में खुटता, मिमियाता डोलता, या तेरी-मेरी तरज पर भूखों मरता। मरता...तू नी चाहे तो मुझे क्या पड़ी? मैं फिर छींके-पिंजरे गढ़-गाँठ दूँगा, रद्दी कागद गत्ते के फिर मोर-चिड़िया बना दूँगा। लिए डोलना उन्हें, उड़ाने-बेचने को...तू जाणे अपनी तो डेढ़ टाँग है, उसे लेकर लँगड़ाता-लठियाता चल भर सकूँ हूँ।'' इतना बोल फन्ने ने पास बिखरे 'मजबूत इरादा', 'कड़ी मेहनत' 'पक्का अनुशासन' वाले पोस्टरों को सहेज लिया और खिलौनों के लिए कतर-ब्यौत करने लगा।

जय बजरंग बली, तोड़ दुश्मन की नली!' के ऊँचे बैन के साथ नरसिंघा को हनुमान का रूप धरा, फन्ने ने जब झुग्गी के बाहर किया तो टोलेवाले हँसते-खिल्लाते अचरज-अचंभा करने लगे।

''अरे ओ फन्ने! जो मानुसजात को बानर क्यूँ बना दिया रे?'' तगड़े हूँ रे ने डटियाते हुए पूछा।

''धौंकनी के! जीभ जलेगी, बजरंगबली कूँ बानर बोले। बोल जय हनुमान!'' छग्गी ने साथ दिया तो पास खड़ी लुगाइयों ने भी दोहरा दिया।

''माँ-बाप से मँजूरी-मता नी होवे...छोरे के मूँ में गोला ठूँस दिया। दमघुट मर गिया तो?''

''अरे बिचार भी, परबत उठा लिया तो मरे नी, रामगोला मूँ में रख लिया तो मर जायेंगे। फिर नाक-कान से राम-पौन जाएगा ही। वो भी नी तो राम-भगत कभी कोई

मरा है?''

''अधरम का नास हो!... बोलो, जै बजरंग बली की!''

इस बार कई बोल साथ उठे। छग्गी ने हाथ जोड़ हनुमान के चरणों में सीस नवाया तो पास खड़ी लुगाइयों के हाथ भी जुड़ा गए। बूढ़े बीमार बोल उठे–'रावन की लंका जरो, संकट टारो!'

फन्ने ने नरसिंघा के हाथ में सुनहरी पन्नी से मढ़ी गत्ते की गदा और दूसरे हाथ में भीख का खप्पर थमा दिया और उसे टोले से बाहर शहर की तरफ हँकाल दिया। टोले के लड़के-लीतरे तालियाँ बजाते पीछे दौड़े तो फन्ने ने उन्हें डटिया कर बरज दिया।

'हनुमान' बना नरसिंघा जब तक टोले में खड़ा था, उसे लगा था आज वह बड़ा हो गया है। बहुत बड़ा। ओले के बड़े-बूढ़े उसे हाथ जोड़े सीस नवा रहे...पल-पल मारपीट करने वाला फन्ना उसके आगे झुका था। पोखर पार कर जब वह मजूर बस्ती के छोर तक पहुँचा तो उसे धूप खाते छोरे-छोकरों ने घेर लिया।

''अरे! जे कऊन? बानर... बजरंग बली।''

''ओ-ओ तू किहाँ से आया?''

नरसिंघा ने उन्हें आँख चौड़ा कर के घूरा तो एक बोल उठा, ''ओ बोड़म, तेरा जे रूप! अरे! भेण का जे तो आपना नरसिंघा।'',

''ओय नरसिंघा! जे तेरी गदा, जे तेरी पूँछ। अरे! जे कैसे? बानर का मूँ तो काला होवे, तेरा सुफेद और फिर उसमें जे का?'' कह कर चंदू ने उसके मूँ-गोले पर हाथ फिरा दिया।

नरसिंघा को मजूर-बस्ती में इसी का डर था। उसका चंदू से कल ही टंटा हुआ था। वह नरसिंघा से अंटस बाँधे था। सोचता हुआ वह आगे बढ़ा कि फिर चंदू सामने आ खड़ा हुआ। उसने हाथ बढ़ा कर उसका मुँह काला कर दिया। जाने कहाँ से वह काले में हाथ सान लाया था। नरसिंघा भभक कर 'हू-हू' करने लगा। आगे बढ़ा कि उसने पीछे से उसकी दुम खींच ली। सब खिल-खिलकार हँस पड़े। अभी और भी गुल खिलते कि तभी काम-कमठान पर जाते मजूर-मजूरनियों ने बचाव कर पूँछ ठीक लगा, उसे बस्ती के पार कर दिया।

बस्ती पार कर वह बाजार पहुँचा। पहले तो घमक-धमककर चलता, फिर पेढ़ी दुकान के आगे जा खड़ा होता। इधर-उधर खूँदता, लोगों का ध्यान बँटाता और भीख

का पत्तरा आगे कर देता। कोई देता, कोई धकियाता। इसी तरह वह दूजे पहर तक डोलता रहा।

वैसे फन्ने ने उसे कई दिनों, खूब रबत करवाई थी–नाक में नली घुसेड़ साँस लेने की। एक बार तो गोला उसके मुँह में भर कर उसे दिन भर झुग्गी में रखा था। महावरा हो जाने से दम तो नहीं घुटता था, पर मुँह में ठुँसे गोले से उसके जबड़े तने के तने रह गए थे। नाक से साँस लेते-लेते वह थक भी गया था पर उसने हिम्मत नहीं हारी। फन्ने का भी डर था। उसने सफा बोला था–बेट्टे! जे मजूरी है। कामचोरी न करना। भूखों ही नी मरेगा। पोस्त के फोक का रस भी नी मिलने का तेरे को...और तेरी माँ भी दूजे ठौर किसी मरद के जा बैठेगी, फिर तेरा किन ठौर? सोच में डूबा था कि टप से पत्तर ठिनका। किसी भगत ने पैसा गैरा था।

चढ़े सूरज की किरन, सिंदूर-पुते तन पर काटने लगी तो वह एक तरफ सुस्ताने बैठ गया। सड़क से पीठ मोड़ उसने पत्तर में हाथ घुमाया तो पाँच-दस पैसों के सिक्कों से मुट्ठी भर गई। गिने तो दो रुपए ऊपर बीस पैसे थे। उसने चाहा, पैसे कहीं सहेज ले, पर रखे कहाँ? कुरत्ता-कच्छा होता तो खीसा-खीसू होता, यहाँ तो लंगोट के नाम देह पर एक चिंदी बँधी थी–बस।

''हनुमानजी, अपनी पूँछ सहेजो–पैर पड़ गया तो पाप लगेगा!'' इतना कह कर उस मजूरनुमा आदमी ने उसकी पूँछ उसके हाथ में थमा दी और उसके सामने दस पैसे फेंक दिए। अब दो रुपए से ऊपर मजूरी हो चुकी थी। वह पँच पैसे की मूँगफली और एक 'चा' का हकदार हो गया था। पर खाए-पीये कैसे? मुँह में रामगोला जो ठुँसा है। उसे अब भूख लग आई थी। भूख तो रोज लगती और मरती है, पर प्यास? कैसे पीए पानी? उसने एक बार गोला उगल डालने की सोची पर फिर कैसे गोला भरेगा, मिट्टी पोतेगा? यही सोच वह रुक गया। थोड़ा ठहर कर वह उठ खड़ा हुआ। दो-एक दुकानदारों के आगे उसने खूँद भरी भी, पर जब प्यास और सताने लगी तो आगे न जा, जिस गैल आया था, उसी पर बढ़ चला।

वह बाल्मीकि-बस्ती के आखिरी छोर पर खड़ा था। तभी स्कूल की छुट्टी हुई। स्कूल से छुटे छोरों के टोल ने उसे आ घेरा। घंटों पोथी-पाटी से रुँधे छोरे अब चुहल पर चढ़े थे। एक डाटक छोरे ने पूँछ ही नहीं उखाड़ी, उसकी गदा भी छीन ली। वह बिलबिला कर 'हूँ-हूँ' करता धमक रहा था कि एक हाथ उसके खप्पर में पड़ा और सिक्के खनखना कर धरती पर बिखर गए। उसने 'बचाओ-बचाओ' की गुहार जीभ पर उगाई पर बैन कंठ में घुट कर रह गए। उसने हड़बड़ा कर सिक्के सहेजे तो अब

उसके पास कुल एक रुपया दस पैसे थे। दुश्मन की नली तोड़नेवाले बजरंग बली दुश्मन को महाबली देख खुद रोने लगे। उसने मुँह से गोला निकाल गला फाड़ कर रोना चाहा, पर...दिन-भर भूखा-प्यासा-अनबोला रहा और मजूरी लुट गयी। 'बाप्पा को क्या बोलूँगा? वो मानेगा, भरोसा करेगा?' सोचता हुआ वह उठा और मरे-मरे पग बढ़ाता पोखर की पुलिया के पास जा खड़ा हुआ।

आगे फिर नरसिंघा का वही साँग था, पर अब उसके साथ छग्गी लगी थी- एक हाथ में सोटी और दूजे में भीख-पातर थामे, 'जय बजरंग बली, तोड़ दुश्मन की नली!' के 'जै बोल' के साथ पीछे चलती ऊधमी छोकरे-लड़कों के झपट-झोटों से महाबली को बचाती।

कल नरसिंघा ने लाख हनुमान रामजी की आन ले कहा था-''मैंने रामगोला काढ़ मूँ नी खोला। न खाया, न पिया। पहर खूँदना-माँगना किया पर फन्ने ने एक न मानी। उसने डटियाया, धमकाया ही नहीं उसकी कुट्टस भी की। छग्गी फिर छींके-पिंजरे लिए खाली हाथ लौटी तो उसने हुकम दिया कि कल से वह भी उस 'रोनिए टुकड़िए बजरंगे' के साथ जाएगी। वैसे भी कौन कमा के जुटा रही? इसीलिए मा-पूत आज संग-संग डोल रहे थे।''

पेड़ों तले धूप घिरती कि दोनों निकल जाते। बाजार-बस्ती में माँगते घूमते। परछाईं के पेड़ बनते-बनते जहाँ अलगाव दिखता, वही नरसिंघा अलसा के बैठ जाता। खाने-पीने की हठ करता। छग्गी नहीं मानती तो पसर जाता। खड़ा न होता। हार कर छग्गी उसके मुँह से गोला हटा, उसे कुछ खिला, ठंडा पानी पिला देती। खा-पी के भी वह फिर से गोला मुँह में धरने को राज़ी न होता।

''माई री! मैं बोलने-हँसने को तरस गिया। इस कठगोले से जबड़ा पिरा गया। किसी दूजे हिल्ले लगा दे ना।''

''दूजा हिल्ला? अपनी 'जनती' को नचा चोपड़ पे। पर इस डाइन को कौन देखे? तू कौन मर जाएगा जो एक तनी दड़ी-गेंद मूँ में रख लेगा?''

''मरने की ना बोलता। नाक में खुँसी नली से खूब साँस लूँ हूँ पर आसपास देख, तेरे सूँ बोलने हँसने को जी करे पर बोलूँ कैसे? सुभू ननकी मुनिया मुझे देख डर गई, भूत...भूत बोल पीठ फेर खड़ी हो गई। मेरे जी में आया, प्यार कर पुचकार लूँ...''

''आया बड़ा प्यार-पुचकारवाला...''

''क्यों, बच्चों को प्यार-पुचकार पाप है भला?''

''अरे, तू भी कौन स्याना है?'' बालक ही है। तुझे प्यारा-पुचकारा किसी ने जो तू भी वैसा ही करेगा... सौ ऊपर बीस, तेरे मरे बाप के हाथ धर, फन्ने ने मेरे साथ तुझे भी अपने हिल्ले लिया है-भरी बिरादरी के आगे। फिर पोस्त की लत न हो तो मैं ही भगाकर पार कर देती तुझे, पर...चल, खोल थूथनी।'' और उसने जबर से रामगोला उसके मूँ में ठूँस, गोल हाथ फिरा उसे ज्यों का त्यों कर दिया।

दोनों फिर चल निकले। छग्गी पतरा पसारे घिघियाती और नरसिंघा दुकानों के आगे घूमता-खूँदता रहता। जब धूप पीली होकर मरने लगती, दोनों पोखर के टोले को मुड़ जाते।

यूँ तो छग्गी-नरसिंघा हर साँझ फन्ने के आगे डेढ़-दो रुपए की रेज़गारी लाकर बिखेर ही देते, पर इससे काम सधता नहीं था। नरसिंघा समेत छग्गी को अपने 'घर घालने' के लिए फन्ने ने जो करजा कराया था, उसका बोझ माथे था ही, ऊपर एक छेक और था कि-'जो फिरे, वो चरे। दोनों माँ-पूत तो 'कमाई' से परबारे पैसा मार दिन में कुछ न कुछ खा-पी लेते थे और वह दिन-भर पुलिया पर बैठा, उबासी लेता जुएँ झारता रहता। छग्गी ने 'रामजी की सौं' ले, गंगा मैया का वास्ता दे उसे कमाई न खरचने का बिश्वास दिया था, पर उसे परतीत न होना था, न हुआ। और होता भी कैसे? एक दिन उसने रामगोले पर पहचान की रेख डाल कर उसे आगे रख नरसिंघा के मुँह में धरा था। पर जब साँझ उसने खुद गोला अपने हाथ से निकाला तो पहचान की रेख पीछे थी। उसने दोनों को खूब कूटा-पीटा भी पर कमाई में बढ़ोतरी कहाँ? उसे दिन-भर सोच रहती कि क्या जुगत जोड़े कि कमाई बढ़ जाए। नाम उसका फन्ने था। वह कई फ़न जानता था पर सर मार कर भी वह कोई फन न निकाल सका।

* * *

उस दिन गिनती भर को सिक्के ला कर छग्गी ने फन्ने की हथेली पर धरे थे, फिर भी वह चुप रहा था। रात को वह ठीक से सो न सका था। जब तब कुछ बुदबुदाता रहा था। भोर को भी वह 'राम-राम' 'सियाराम' रटता रहा था। सूरज के थाल के दमकते ही वह 'राम लक्ष्मन जानकी, जय बोलो हनुमान की' के जैकार के साथ लकड़ी टिकाता टोले से निकल गया था। जब लौटा तो उसके चेहरे पर संतोष की रेख अँकी थी। उसने सर खपाकर अपने बालपन में राम रखा पंडित से सुनी सीताराम बजरंगबली की कथा से आखिर 'रामफल' और 'रामफल के बीज' की जोड़-तोड़ बिठाकर एक नई कथा गढ़ ली थी। 'भगतों का, खास तो मा-भेणो' का धरम-धियान खिंचेगी जे

कथा। इसी आस-विस्वास को पाल वह अदालत के आगे दरी बिछाए बैठे बाबू के आगे जा टिका था। बोला-''बाबू एक की ठो सवा ले लो, पै जैसे हम बोले वैसा मोटे कागद पर जई मसीन से लिख दो।'' वह बोलता गया था और बाबू अंगुलियाँ मार कर क़ागज़ पर टिपटिप करता गया था। बिना चाँ-चूँ किए सब पूरा हो गया तो पैसे देने के पहले फन्ने ने कहा-''बाबू, जो लिखा पढ़ दो एक बार।'' वह पढ़ने लगा था।

राम लछमन जानकी, जै बोलो हनुमान की।

* * *

तो भगतों, जो होनी थी जूँ हुई। राम, लछमन जानकी बन में रहे। सिंझया आकास में जूँ फूलै जैसे मन में छलबल की जवाला फैले। सोने का हिरन एक चौकड़ी मारता डोलै। जनक दुलारी की नैन हिरन की भोली दीठ सौं जुरै। मोहिनी रूप छबी देख बोली-''नाथ! इसे ले आओ। हम पालै-पोसैं। राम जी समुझावैं-''परान पियारी। माया का देस है, जो यह बन है। कौन जाने ये मरग छौना किसी का हो जादू टोना।'' लछमनजी हामी भरै पर भगतों, जानो तिरिया हठ। सीताजी देवी थीं, सती थीं, पर थीं तो लुगाई जात। बस, पकड़ बैठी तिरिया हठ। राम लछमन जानकी, जै बोलो हनुमान की!

चले राम, उठा धनुष-बान। लछमनजी जानकी के निगाह बान। राम पीछे-छौना आगे। जैसे माया हरि से भागे। साँझ बिलानी-निसा घिरानी। राम न आने। पल-छिन गुँथ पहर बनैं तो जानकी हिरानी। दाँई आँख उड़ै, मन डूबे। बोले ब्याकुल बानी-''देवरजी! जाओ, अपन भय्या को ल्याओ।'' लछमन जी करैं आना-कानी। ''बियाबान बन, कैसे छोड़ै राजरानी।'' पर सीताजी पल बिफरै काट करता बोल मारै। सीता को लछमन रेखा भीतर घाल, राम खोजन चले, लखनलाल।

राम लछमन जानकी, जै बोलो हनुमान की!

फिर तो जानो भगतों! लंका के रावन की जो कुटिलता थी, फली और जानकी गई छली। उनका हरन हुआ। राम-लछमन डेरे आए। सीता नहीं पा अकुलाए। राम करे बिलाप, लछमन अपनी करनी पर पछताए। शबरी-जटायु सब आए विपद जान, अंत आए पवन पूत हनुमान। हाथ जोड़ राम-चरनों में सीस डाल माँ जानकी का अता-पता लगावे का परण धार। चरणरज ले बोले विकराल। पहाड़ फाँद उड़ चले बजरंग बाल। बन-बन छाने, नदी-नद खंगालै। पे सीता मैया का ठौर न पावै। तीन दिन-तीन रात अन्न न जल, कंद न फल, परान हिरानै, कंठ सुखानौ। देव राम दुखी-माँ जानकी गुमानी। खावै-पीवै कैसे? हनुमान सयानौ पे परान जो न रुकें, तो माँ को भी कैसे

पावैं? बस, जे ही धार रामफल एक मुख में गेरो। रामनाम लिए हिरदय जुड़ानौ। पे रामफल के बीज धरती पर कैसे डारै। जे तो राम भगत को हीय बिदारै। कभू नहीं, बस पिरण किया जूँही मुख में धारे रहे। फिर दिन उगै, निसा घिरै। इत्ते में राम उच्चार सूँ मुँह पड़ा बीज अंकुरै। अब हनुमान रामनाम कैसे उचारैं? पर हठी हनुमान धरा पर बीज न डारे। मन ही मन राम पुकारैं। बीज मुख में फैले अब हनुमान साँस कैसे लेवें? दम घुटै, साँस रुकै पर हनुमान परण से ना टरै। रामफल के बीज मुख धारै अंत तो जा पूगे लंका के असोक-बन। बस वहीं सीताजी कूँ राम की मूँदरी दिखाई। सीताजी। राम लछमन की कुसलाई पूछैं। पर हनुमान मुख से नहिं बोलै। हनुमान कूँ सौन आकुल-ब्याकुल देख सीताजी ने आपन तेज जगाई। हनुमान की मन चीतीं कूँ टोह पायो। के राम के परम भगत राम बीज मुख में पुसाए फिर क्या? राम दुलारी ने आपन आँचर फैलाए। हनुमान ने राम-फल बीज आँचर में गेरायौ। सीताजी ने हनुमान कूँ जलपान करायौ। अपना भाग सराहौ। और जयरामजी के साथ सीताजी का समाचार ले हनुमान राम की ठौर उड़ै।

तो भगतों! तभी से जो देवी रामफल के बीज को आपन आँचर में धार इन रामभगत हनुमान की जलपान से सेवा करैं, उन्हैं राम उसी ढब मिलै जैसे जानकी को मिलै। राम लछमन जानकी, जै बोली हनुमान की!

ठिकाने पर आकर उसने बाँस पर टँगी 'परबत धारे हनुमान जी' की फोटू को चौखट में से हटा गुडीमुड़ी कर नमक की हँडिया में डाल दिया और उसकी ठौर अपनी गढ़ी कथा के कागद को मढ़ दिया।

फन्ने की सूझ ठीक बन पड़ी थी। राम-बीज की जो कथा उसने गढ़ी थी, खूब चली-फली थी। अब फन्ने भी बजरंग बली के संग हो लिया। पढ़े-लिखो को वह जा कर ना-ना करते भी कथा की काँचमढ़ी पाटी थमा देता और जो ना पढ़ होते, उन्हें खुद डूब कर भगती-भाव से राम-फल की कथा सुनाता। धूप सेंकते अपने छोटे-मोटे धंधे में लगे लोग कथा के बोल सुन-समझ लेते और कुछ-न-कुछ दान-रूप कथा-पाटी के काँच पर धर देते। कभी-कभार कोई भगत उन्हें न्यौत ही देता। पहले फन्ने कथा सुनाता, आँखें भर लाता और बीच-बीच में बजरंग बली के रूप धारे नरसिंघा के चरण छूता। छग्गी आँखों से आँचल लगाती। फिर जब कथा पूरी होती तो कोई भगतीमती घरनी बजरंगबली के आगे आँचल पसार खड़ी हो जाती। 'जयराम', 'जय सियाराम' की रट लगाती 'राम भगत हनुमान की जै' के साथ राम-बीज दान की बिनती करती पहले तो बजरंबली सुनी-अनसुनी करते, फिर विनय-चिरौरी होती तो रामगोला छोड़

मुँह में धरे रामफल के बीज आँचल में उगल देते। तब जलपान-भोग होता। पहले बजरंगबली जल लेते, फिर भोग लगाते। बाद को फन्ने और छग्गी खाते, पहले नहीं। बोलते, 'पहले रामभगत भोग लगावैं, तब रामभगत के भगत परसाद पावैं।'

इधर नरसिंघा को फन्ने पोस्त का रस भी छक कर पिलाने लगा था। उससे हँसी-चुहलें भी करता। छग्गी भी कम ही पिटती। दिन-भर बीड़ियों के सुट्टे उड़ाती। फन्ने से ठुमक-ठुमक बतियाती। पर नरसिंघा गुल-गप्प-मूक रहता। अच्छा से अच्छा भोग लगाकर ठौर पहुँचाता, पोस्त पीता और बीड़ी का धुआँ उगल कर पड़ा रहता। चुपचुप! बुलाने पर भी 'हाँ-हूँ' ही करता। बिना बोले भी उसका मुँह खुला ही रहता। कभी जब मुँह में मक्खी भिनिभिनाने लगती, तभी वह मुँह बंद करता। मन से तो बोलता ही नहीं पर जब बोलता तो बेपर की हाँकने लगता।

''मैं बजरंगबली हूँ-फन्ने तू मेरा चाकर-मैं तेरा ठाकर...मेरा झूठा खाने! मेरा हगा खाएगा? और तू कहाँ की महतारी...फन्ने का भूत...उसके मूँ में दारू का कुल्ला करती - मेरे मूँ में गोला ठूँसती। इस लंगड़ को अपनी टंगड़ पे सुलाती और मुझे टाँग मारती। मैं कभू तुम्हारी लंका में लंपा लगाऊँगा। भगत-भगतन को भी मूत में बसाऊँगा।'' उसकी बक-झक सुन, कई बार छग्गी फन्ने से लड़-भिड़ गई थी।

''हजार बार बोला तेरे कूँ, इस लपरू को जास्ती पोस्त का पानी मत पिला, पर...''

''अरे, तेरे बंदर को जब भोग के नाम माल-मलीदा उड़वाऊँ तब तो नी बोले तूँ... फिर पोस्त, कौन तू हग रही...पैसे काटूँ तभी आवे ना।''

''कौन तू पैसे अपने पसीने के काटे? दिन-भर मेरा छोरा गोला-पटी कटी जीभ लिए डोले, तभी आवै नी पैसा।''

''अरे रीछनी! अपनी जंगली जीभ से तू मैं दोनों क्या कर रिये जो तेरा जे मा-चेंट बेट्टा कर लेता! फिर कौन परबत उठा लिया जीभ पर, एक हलका कठगोला और दो बीज ही तो धार रखे हैं थोथ में...बदल में माल-मलाई पावे, ऊपर से नसा-नुसी का ठाठ अलग।''

''अरे ओ लंगड़-बतंगड़! तू ही ना कर ले, भर ले जे सब साँग। मैंने भोत किया। अब तू बन बजरंगबली, मेरे भाई के साले!'' एकाएक नरसिंघा फटाफट बोल गया।

''लंगड-बंगड़। जो बोल, हूँ तो तेरी माँ का खसम। मैं जो ये सब करने लगा तो तुम दोनों खाओगे क्या मेरा हगा-मूता?''

''री मा! अब जे मौन-मजूरी मेरे से नी होनी। छोड़ इसकी झोली-झुग्गी और कहीं और जा पड़, कहीं काम-मजूरी करेंगे।'' नरसिंघा ने छग्गी का हाथ थाम कहा।

''है इस छगली की हौंस जो चले और ठौर? फिर सुभू उठते ही पोस्त का पानी गले न उतरा तो दो दिन में मैला मूँ से निकलेगा। ''फन्ना तनक कर बोला।

''बेट्टा! कसाई के खूँट बँधे हैं हम दोनों। सो भी जा'' कहकर छग्गी ने उसका माथा सहला दिया।

फन्ने के होठों में ठुँसा बीड़ी का सुलगा ठूँठ खोली के अंधधुप्प में लाल जुगनू-सा दिप-दिप भर रहा था। नरसिंघा की गुर-गुर अब भी न थमी तो छग्गी ने फन्ने के होठों से बीड़ी झपट उसके मुँह में ठूँस दी।

भोर नरसिंघा बड़ा अनमना था। किरन काटे पर कुनमुनाकर करवट ले उसने फिर आँख मूँद ली। छग्गी ने हाथ पकड़ उठाया। तन पर मिट्टी पुतवा हाथ से मुँह में गोला ठूँस, गदा तान उठ खड़ा हो गया। थोड़ी देर बाद बजरंगबली की जै के साथ तीनों फिर सड़क पर थे।

आज रामनवमी थी। फन्ने ने कुछ बड़ा और बढ़िया पाने के हेतु शहर से सटे गाँव की सुध ली। उसने घर-घर हर चौखट पर, कथा-पाटी, बखान-बता खासा पैसे जुटा लिए। सूरज ऊपर आए-आए तभी उसे बीज-दान के दो-एक न्यौते मिल चुके थे। पर आज वह वहीं भोग लगवाने की सोचे था जहाँ खाना-पान से आगे लत्ते-लूगड़ की जुगत बैठ सके। उसने बजरंगबली के मन-मान का हीला ले पतली हालत के जजमानों को टाल दिया। और बस अड्डे के अगे लिलाए खेत में खड़े बड़े 'रामभवन' को बढ़ चला। वहीं भोंपू पर रामधुन लगी थी। और साँझ को ही उसे संपूरन होना था।

'रामभवन' के ठीक सामने उसने जमावड़ा लगाया। बैठे-बैठे देर हो गई। किसी को आता न देख उसने बीड़ी सुलगाई। दो सुट्टे मारे ही थे कि नरसिंघा ने बीड़ी लपक नाक के छेद में खोंस ली और फिर जोर-जोर से ऊँची साँस लेने लगा। उसकी नाक के दूसरे फुनगे से धुआँ निकला ही था कि तभी घर की मालकिन सामने आ पड़ी। थोड़ा देख-समझ बोली-'कैसा है तुम्हारा बजरंग बली? बीड़ी का भोग लगावे, वो भी नाक से।' इतना कह, मुस्कान-सी तान आगे हो गई। तभी फन्ने ने झट उसकी नाक से बीड़ी झपट दूर फेंक दी और 'जै बजरंगबली' के साथ पाटी उसके आगे कर दी।

''मैंने सुन रखा है तेरे बजरंग बली और रामफल की कथा के बारे में...मैंने तो तुम्हें न्यौतने के लिए उन्हें कहा भी था। बैठो आती हूँ कहती घाघरे-लुगड़े में बसी

धरम-धियान वाली अधेड़ उमर की भगतन घर में हो ली। धड़ी टले वह आई। बजरंग बली की आरती उतार, आँचल फैला, सामने खड़ी हो गई। नरसिंघा ने मुँह चौड़ा कर गोला हटा रामबीज आँचल में उगल दिया। न जाने कैसे बीजों के साथ लद से थूक का थक्का भी गिर गया। उसने आँखें तरेरीं। तभी ''जै सियाराम'' के संग रामगोला धमक से फन्ने के कंधे पर जा लगा।

''अरे, जे का करो बजरंगबली?'' फन्ने उफान रोक बुदबुदाया।

''तोड़ दुश्मन की नली। राम कूँ बेंच बजरंगबली के कलपाने वालों ढोंगियों। लुच्चों। मेरी आवाज की लास खाओ तुम...नरिंसघा चीखता बोला।

''क्या हुआ रे तेरे कूँ?'' छग्गी ने पूछा।

''चुप...दोनों दिन भर हा-हू कर हँसो, ठिठोली करो। भला देख बोलो, बतियाओ...मैं दिन-भर कठगोले के नीचे जीभ दबा अरथी-सा डोलूँ-फिरूँ।''

''के बोल रिया तुमारा बजरंग बली?' मालकन ने पूछा।''

''अरे नरासिंघे! पगला गया रे क्याा?''

''पगलाया नी'', ठीक बोल रिया हूँ। अब रोक मेरा बोल। आज वो सिगरेट बेचने वाले लोग देखे तूने? दो आदमी कित्ते लंबे-लंबे बाँसों पे चढ़े चलते थे-उन्हें देख जगत मुलका रिया था। मेरा मन हँसी से भर गया पर हँसूँ कैसे? मेरी हँसी मर गई, बोली गोले के नीचे दब गई। ध्यान है, कल एक मेम ने छतरी खोली तो उसके तार में उसके बालों का टोपा उलझ ऊपर गया-'गंजी मेम' कहकर लोग कुरलाए, तुम दोनों बात मार-मार के खिल्लाए और मैं अपनी बोल की लास उठाए मन-मारे मुँह-मूँदे खड़ा रिया।''

''अरे, बोल के कौन तेरा पेट भर जाता, बिन बोले जो माल मिले तो भी बड़-बड़ा रिया है।''

''चिड़िया को सोना चुगा दो, बिना चहके रे सकती है? अब मैं भी बोलूँगा और खूब बोलूँगा, मुझे रोक, तेरे बाप का ही तो?'' और वह दनादन गालियाँ उगलने लगा। कान में अंगुलियाँ डाल मालकिन जाने लगी तो वह उसके आगे फिर गया-''अरे भगतन! जावे कहा... तू अंधी है जो मैं तेरे कूँ बजरंगबली दिखूँ? मैं तो नरसिंघा। जे रामबीज हैं के खजूर की गुठली? धरम पाल रही। तुम जैसे ढोंगियों ने ही मेरे मूँ में गोला ठुँसवाया, मेरी आवाज को मारा है। मैं तेरी भी लंका में आग लगा दूँगा।

इतना कहकर वह फाँदता, धमकता सामने ओसारे में जा कूदा और राममूरत के आगे सजे पूजा के फूल-पान को इधर-उधर बिखेरता, बम-बम करता, भोजन-पानी को रौंदता भाग खड़ा हुआ।

आलमशाह ख़ान

जन्म : 31 मार्च, 1936 उदयपुर (राजस्थान)

प्रमुख कृतियाँ : किराये की कोख, परायी प्यास का सफर, एक और सीता (सब कहानी संग्रह)

दिवंगत